# चम्पापुरी तीर्थ

लेखक
भँवरलाल नाहटा

प्रकाशक :
महेन्द्र सिंघी
पी-२५, कलाकार स्ट्रीट
कलकत्ता-७

वीर निर्वाण संवत २५०१

मूल्य ७५ पैसे

# चम्पापुरी तीर्थ

— भँवरलाल नाहटा

चौदह राजलोक में सर्वोच्च महापुरुष तीर्थंकर होते हैं, जो स्वयं आत्मा से परमात्म पद पर प्राप्त हुए हैं और मुमुक्षुजन को स्वपद प्राप्त करने में परम आधारभूत हैं। आचारांग निर्युक्ति में "जम्माभिसेय निक्खमण चरण नाण-प्पयाय निव्वाणे" लिखकर उन तीर्थंकर महापुरुषों की च्यवन-जन्म-दीक्षा केवलज्ञान व निर्वाणभूमि को तीर्थ बतलाया है, उन स्थानों पर बने हुये मन्दिर 'भक्ति चैत्य' कहलाते हैं। सहस्राब्दियों से जैन संघ उन तीर्थस्थानों की यात्राकर अपने को धन्य-कृतपुण्य मानता आया है। बिहार प्रान्त में ऐसे पवित्र स्थन सर्वाधिक हैं जिनके इतिहास पर प्रकाश डालना अत्यावश्यक है। बारहवें तीर्थंकर श्री वासुपूज्य स्वामी की पंच कल्याणक भूमि चंपा, चंपापुर या चम्पानगर की ऐतिहासिक गवेषणा इस लेख का उद्देश्य है।

वर्त्तमान चौबीसी के बारहवें तीर्थंकर श्री वासुपूज्य स्वामी चम्पानगर के राजा वसुपूज्य और जयामाता के अंगज थे उनका देहमान ७० धनुष और ७२ लाख वर्ष की आयु थी, महिष उनका लांछन था। ६६ गणधर उनके प्रधान शिष्य थे, मिती अषाढ़* शुक्ल १४ को दिन में तीसरे प्रहर में आपका चम्पा में ही निर्वाण हुआ।

भगवान महावीर ने भगवती सूत्र के पंचम शतक का दशम उद्देश यहीं पर कहा था। कल्पसूत्र में लिखा है कि भारद्वाज गोत्रीय भद्रयश स्थविर से उडुवालिय गच्छ निकला और उससे चार शाखाएँ १ चंपिज्जिया २ भद्दिजिया ३ काकंदिया ४ मेहिलिज्जिया निकली, इनमें चंपिज्जिया की श्रमण शाखा चम्पापुरी से सम्बन्धित थी।

---

* दिगम्बर साहित्य में निर्वाण तिथी भाद्रपद शुक्ल १४ पायी जाती है। एवं चम्पापुर से ३० मील दूरवर्ती तमौलिका तट स्थित अग्रमन्दर पर्वत जिसे मन्दारगिरि कहते हैं, निर्वाण कहा जाता है। वहाँ दो दि० जैन मन्दिर हैं, आजकल श्वे० यात्री बहुत कम जाते हैं।

भगवान महावीर के समय में चम्पापुरी अङ्ग* देश की राजधानी थी। इसके स्वामी दधिवाहन को शतानीक कोशाम्बीपति ने हराकर पदच्युत कर दिया था और बाद में कोणिक ने इसे मगध में मिला लिया और पितृ शोक से राजगृह से राजधानी हटाकर चम्पानगरी को विकसित कर राजधानी बना ली थी। औपपातिक सूत्र ( उववाई उपांग ) में चम्पानगर का बड़ा ही विशद वर्णन है। यह आचारांग का उपांग है सभी आगमों में नगर वर्णन आदि के प्रसंग में उववाइ सूत्र देखने की भोलावण दी गई है अतः यह सूत्र अति प्राचीन और प्रामाणिक है। तत्कालीन भारतीय संस्कृति के इतिहास में इन वर्णनों का बड़ा भारी महत्व है। नगर के बाहर और भीतर बड़े बड़े उद्यान, तालाब, बगीचे, कुए बावड़ी आदि थे। प्राचीर और परिखा से घिरा हुआ सुरक्षित नगर ऋद्धि, समृद्धि से परिपूर्ण था। यहाँ बहुत से अर्हंतचैत्य जिनालय थे। नगर के उत्तर पूर्व-इशान कोण में पूर्णभद्र नामक यक्षालय अति प्राचीन था जो ध्वजा पताका और घण्ट-घण्टिकाओं से मण्डित तोरणयुक्त था, यक्ष प्रतिमा के हाथ में मोरपीछी थी। यह यक्ष नागरिक जनों से पूजित और बड़ा ही प्रभावशाली था। इसका उद्यान बड़ा ही विशाल और मनोहर था, जहाँ भगवान महावीर का समवशरण होता था। भगवान महावीर के चातुर्मास वर्णन में चम्पा और पृष्टचम्पा में चतुर्मास करने का उल्लेख मिलता यतः—"चंपंचपिट्ठिचंपंच नीसाए तओ अन्तरावासे वासा वासं उवागए" ( कल्पसूत्र ) यहाँ के महाराजा कोणिक और धारणीरानी श्रमण भगवान महावीर के परम भक्त थे जिनका भी उववाई सूत्र में वर्णन है।

जिस प्रकार श्रेणिक के पश्चात कोणिक ने चम्पानगर की राजधानी बनाकर उन्नत किया था, उसके देहान्त के पश्चात उसके पुत्र उदायी ने पिता के महलों व क्रीड़ा स्थानों को देखकर शोक संतप्त हो जाने से मंत्रियों की सलाह से पाटलिपुत्र-पटना को नई राजधानी कायम की। इस प्रकार चम्पानगर का स्थान पाटलिपुत्र ने ग्रहण कर लिया और सेठ सुदर्शन के स्मारक स्थान गुलजारबाग-पटना में बनें, सम्भव है कि उसका देहविलय पटना में हुआ हो जबकि चम्पापुरी कल्प में उसे चम्पापुरी का अधिवासी बतलाया है।

श्रीजिनप्रभसूरिजी ने कलिकुण्ड-कुर्कटेश्वर कल्प में लिखा है कि अंग जनपद में करकण्डु राजा के राज्य में चम्पानगरी से अनति दूर में कादम्बरी

---

* अंगदेश के विषय में भगवान ऋषभदेव के पुत्र "अंगकुमार नामेणं अंग देसो जाओ" लिखा है ( विविध तीर्थकल्प प० २७ हस्तिनापुर तीर्थकल्पे )

अटवी थी जिसमें कलि नामक पर्वत था और उसके नीचे कुण्ड नामक सरोवर था इस वन में भगवान पार्श्वनाथ छद्मस्थ अवस्था में विचरे थे और कलिकुण्ड तीर्थ की स्थापना हुई थी इस समय मन्दार पर्वत के नीचे सरोवर है। कलिकुण्ड स्थान मिर्जापुर के पास बताया जाता है जहां इस समय कालीजी का मन्दिर है तथा विन्ध्याचल की गुफा में अष्टभुजी देवी का मन्दिर है उस उत्कीर्णित मूर्ति के पास ही एक तीर्थंकर प्रतिमा है जो जैन गुफा होने की द्योतक है। कलिकुण्ड की वास्तविक स्थिति कहां थी यह अन्वेषणीय है।

अब मैं सं १३७० के आसपास श्री जिनप्रभसूरि रचित चम्पापुरी कल्प का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करता हूँ जो ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

## चम्पापुरी कल्प

दुर्नीति को भंग करने वाले अंग देश जनपद के भूषण रूप तीर्थ मुख्य चम्पापुरी का कल्प कहता हूँ।

यहाँ त्रिभुवनपूज्य बारहवें तीर्थंकर श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र के गर्भावतार जन्म-दीक्षा-केवलज्ञान और निर्वाण प्राप्ति रूप पंच कल्याणक हुए हैं।

यहीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र के पुत्र मघव राजा की रानी लक्ष्मी की कोख से आठ पुत्रों के ऊपर रोहिणी नामक पुत्री हुई। उसने स्वयंवर में अशोक राजा के कण्ठ में वरमाला डाली और उसके साथ विवाह करके पटरानी हुई। क्रमश उसके आठ पुत्र व चार पुत्रियाँ हुईं। एक दिन उसने श्री वासुपूज्य स्वामी के शिष्य रूपकुंभ-स्वर्णकुंभ के मुख से सुखी होने के हेतुभूत पूर्व जन्म में आराधित रोहिणी तप को सुनकर उद्यापन पूर्वक विधिसह आराधन कर सपरिवार आठ पुत्रों सहित वासुपूज्य स्वामी के पास दीक्षित होकर दम्पतिने—मुक्ति प्राप्त की।

यहाँ के करकण्डू नामक राजा ने कादम्बरी अटवी में कलिगिरि की उपत्यका में रहे हुए कुण्ड नामक सरोवर में श्रीपार्श्वनाथ भगवान को छद्मस्थावस्था में विचरते हुए हस्ति व्यन्तरानुभाव से कलिकुण्ड तीर्थ रूप से प्रतिष्ठापित किया था।

फिर यहाँ सुभद्रा महासती ने पाषाणमय विकट तीन प्रतोलियों के बन्द कपाट सम्पुटों को अपने शील के प्रभाव से कच्चे सूत-तन्तु वेष्ठित चलनी द्वारा कुँए का जल निकाल कर उससे सिंचित्त कर उद्घाटित किये थे। चारों में से एक प्रतोली "मेरे जैसी अन्य सुचरित्रा सती हो—उसके उघाड़ने के लिए बंद ही छोड़ देती हूँ" कहकर राजा आदि लोगों के समक्ष बंद ही रहने दी। उस दिन से लेकर जनता ने उसे चिरकाल तक वैसे ही बन्द देखी।

क्रमशः विक्रम सं० १३६० में लक्ष्मणावती के सुलतान समस्द्दीन ने शंकरपुर दुर्ग के उपयोगी पाषाण प्राप्त करने के लिए उस प्रतोली को गिरा कर कपाट जोड़ी को भी ग्रहण कर लिया !

यहाँ के राजा दधिवाहन अपनी रानी पद्मावती के साथ उसके दोहदपूर्ण करने के लिए हाथी पर आरूढ होकर अरण्य विहार करने गए। अरण्य विहार में हाथी के न रुकने पर चलते हुए हाथी को छोड़कर राजा वृक्ष की शाखा पकड़ कर उतर गया। हाथी आगे चला गया और राजा अपने नगर में आ गया। देवी पद्मावती असमर्थता के कारण उससे उतर न सकी और उसी पर चढी हुई अरण्य में गई और हथिनी से उतर कर क्रमशः अरण्य में ही पुत्र प्रसव किया। वह करकण्डू नामक राजा हुआ। कलिंग में पिता के साथ युद्ध करते माता पद्मावती आर्या ने उसे प्रतिषेध किया। क्रमशः महावृषभ की यौवन-वार्द्धक्य अवस्था देखकर बोधि पाकर प्रत्येकबुद्ध हो कर सिद्धिगति प्राप्त हुए।

यहीं दधिवाहन राजा की पुत्री चन्दनबाला ने जन्म लिया, जिसने भगवान महावीर स्वामी को कोशाम्बी में सूप के कोने में रहे उड़द के बाकले देकर पाँच दिन कम छः मासोपवासका पारणा द्रव्य-क्षेत्र-काल भाव से अभिग्रह पूर्ण होने पर कराया।

यहाँ एवं पृष्ठ चम्पा में प्रभु महावीर ने तीन वर्षाकाल बिताए, समवशरण हुए।

इसी के पास श्रेणिक राजा के पुत्र अशोकचन्द्र—अपर नाम कूणिक महाराजा ने राजगृह को पितृशोक वश त्याग कर नवीन चम्पा चारु चम्पक पुष्पों से सुन्दर नई राजधानी बनाई।

यहीं पाण्डु कुलमण्डन दानवीरों में दृष्टान्त भूत श्री कर्ण राजा का राज्य था आज भी उनके शृंगार चौरी आदि अवदात स्थान इस नगरी में हैं।

यहाँ सम्यग् दृष्टि सेठ सुदर्शन को दधिवाहन राजा की रानी अभयाने संभोगार्थ उपसर्ग किए। राजा के वचनों से मारने के लिए ले जाने पर अपने निर्दोष शील-सम्पत्ति के प्रभाव से आकृष्ट शासन देवता के सानिध्य से शूली का स्वर्णमय सिंहासन हो गया और तीक्ष्ण तलवार भी सुगन्धित पुष्पमाला होकर मनोहर बन गई।

भगवान महावीर का अग्रश्रावक कामदेव भी यहीं हुआ जो अठारह करोड़ स्वर्ण एवं दश हजार गायों वाले छः गौकुलों का स्वामी था। वह भद्रा का पति था। पौषधशाला में मिथ्यादृष्टि देव द्वारा पिशाच, हाथी, साँप आदि

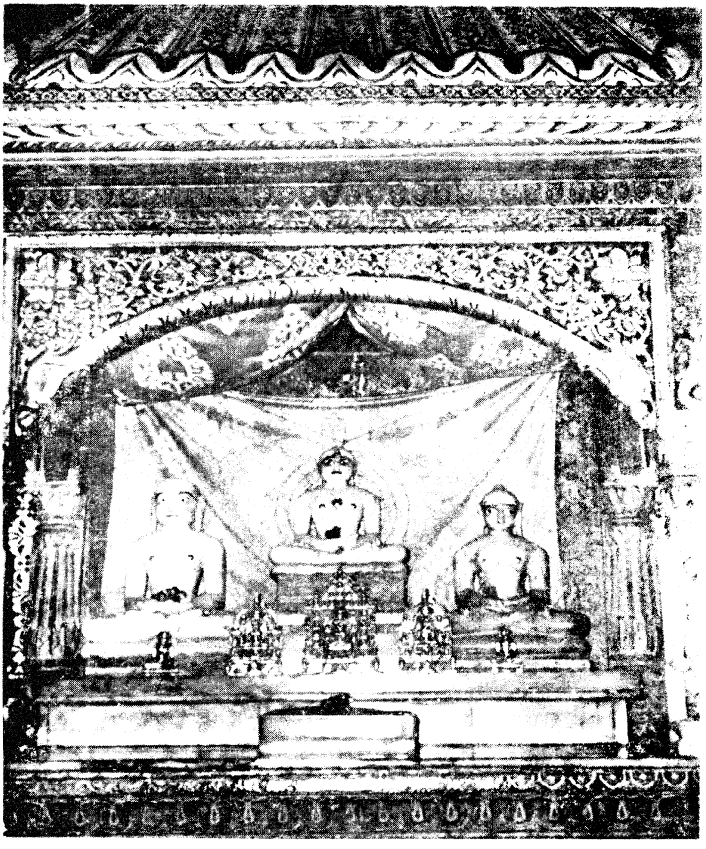

श्री वासुपूज्य जिनालय, श्री मूलवेदी, चम्पापुर

( नं  २ )

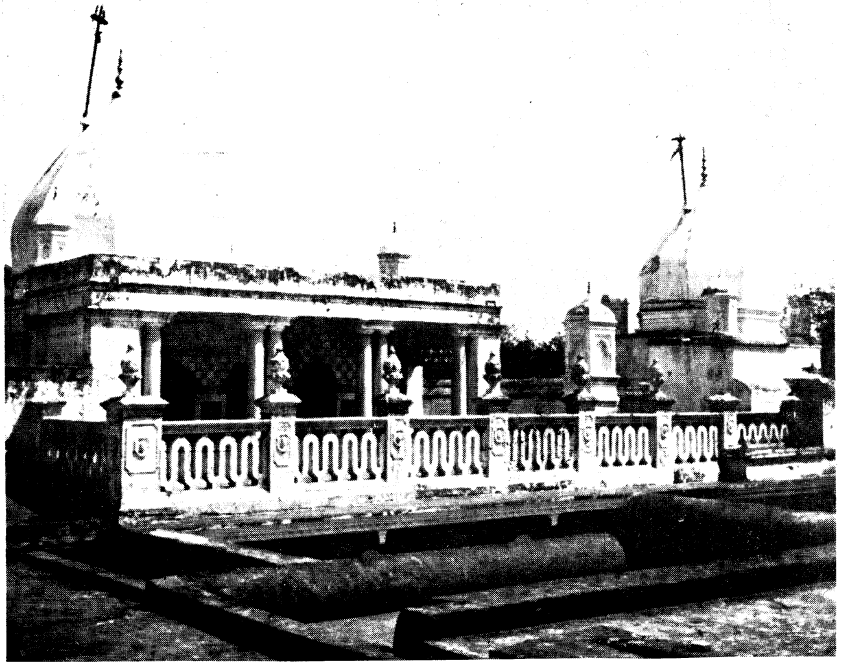

श्री वासुपूज्य जिनालय, चम्पापुरी महातीर्थ

का रूप धारण कर उपसर्ग करने पर भी वह अक्षुब्ध रहा। भगवान महावीर ने स्वयं समवशरण में इनकी प्रशंसा की थी।

यहाँ विचरते हुए चतुर्दश पूर्वधर श्री शय्यंभवसूरि ने राजगृह से आये हुए अपने मनक नामक पुत्र को दीक्षित करके श्रुतोपयोग से उसकी छः मास आयु अवशिष्ट ज्ञात कर उसके अध्ययनार्थ पूर्वों से दशवैकालिक सूत्र की रचना की। उनमें आत्मप्रवाद से छज्जीवणिया कर्मप्रवाद पूर्व से पिण्डेषणा, सत्य-प्रवाद पूर्व से वाक्यशुद्धि एवं अवशिष्ट अध्ययन प्रत्याख्यान पूर्व की तीसरी वस्तु से लिए।

यहाँ के निवासी कुमारनन्दी स्वर्णकार ने अपने धनकुबेरत्व के वैभव मद से अभिभूत ( हासा-प्रहासा को प्राप्त करने के लिए ) तीव्र ज्वाला में प्रविष्ट होकर पञ्चशैल द्वीपाधिपत्य प्राप्त किया। उसीने पूर्वभव के मित्र से बोध पाकर गोशीर्ष चन्दनमय जीवित स्वामी की अलंकार विभूषित देवाधिदेव महावीर स्वामी की प्रतिमा निर्मित की।

यहाँ के पूर्णभद्र चैत्य में विराजित श्री महावीर स्वामी ने कहा था कि जो अष्टापद पर आरोहण करता है वह उसी भव में मोक्ष गामी है।

यहाँ श्री महावीर स्वामी का उपासक पालित नामक वणिक हुआ। उसके समुद्र यात्रा में जन्म हुआ पुत्र समुद्रपाल नाम का था जो किसी अपराधी को मारने के लिए ले जाते देख कर प्रतिबोध पाया और मोक्ष को प्राप्त हुआ।

यहाँ के सुनन्द श्रावक ने साधुओं को मलदुर्गन्ध की निन्दा की और मर के कोशाम्बी में श्रेष्ठिपुत्र हुआ, व्रत ग्रहण किया। दुर्गन्ध उदीर्ण होने पर कायोत्सर्ग ध्यान द्वारा देवता को आकृष्ट कर अपने अंग को सुगन्धित कराया।

यहाँ कौशिकार्य शिष्य अङ्गर्षि-रुद्रक ने अभ्याखान संविधानक और सुजात प्रियंगु आदि संविधानों को बनाया।

इत्यादि नाना प्रकार के संविधानक रत्न प्रकटित नाना वृत्तनिधान यह नगरी है। इस नगरी की प्राकार भित्ति को प्रिय सखी की भाँति फैली हुई तरंगों की भुजाओं द्वारा प्रतिक्षण सर्वाङ्ग आलिङ्गन करती पवित्र घन रस पूरितान्तर वाली उत्तम नदी है।

उत्तमोत्तम नरनारी रूपी मुक्तामणि को प्रसव करने में शुक्ति के सदृश यह नगरी विविध वस्तु शालिनी-मालिनी जयवन्त है।

भगवान वासुपूज्य स्वामी की जन्मभूमि को उनकी भक्ति पुरस्सर विद्वान लोग स्तवना करते हैं। चम्पापुरी का यह कल्प श्रीजिनप्रभसूरि ने कहा।

चतुरशीति महातीर्थ नाम संग्रह कल्प में श्री जिनप्रभसूरि जी ने "चम्पायां विश्वतिलकः श्री वासुपूज्य" लिखकर भ० वासुपूज्य को विश्वतिलक नामसे संबोधित किया है एवं पार्श्वनाथ स्वामी के तीर्थों में "चम्पायामशोक" लिखा है।

यति वृषभ ने केवल चंपा का नामोल्लेख तिलोयपण्णति में किया है। छट्ठी शताब्दी में पूज्यपाद ने निर्वाणभक्ति में "चम्पापुरे च वसुपूज्य सुतः सुधीमान् सिद्धि परामुपगतो गतरोग बन्ध" लिखकर चम्पापुरी में निर्वाण बतलाया है। रविषेण के पद्मपुराण में "श्रावस्त्यां संभव शुभ्रं चम्पायां वासुपूज्यकं" लिखकर वासुपूज्य स्वामी का जन्म कल्याणक माना है। सातवीं शती के जटासिंह नंदि ने "चम्पापुरे चैव हि वासुपूज्य लिखकर उनको निर्वाण-भूमि माना है। जिनसेन ने हरिवंशपुराण ( सर्ग १६ ) में चम्पापुरी का इस प्रकार वर्णन किया है।

बाह्योद्यानेऽथ चम्पायाः पतितोम्बुजसंगमे।
सरस्यम्बुरुहच्छन्ने तदुत्तीर्य तटीमितः ११४
मानस्तंभादिसंलक्ष्यं वासुपूज्यजिनालयम्।
परीत्य तत्र वंदित्वा दीपिकोज्जवलितेऽत्रसत् ११५

इसी हरिवंश पुराण में आगे चलकर लिखा है कि वसुदेव ने चम्पापुर में वासुपूज्य जिनालय को वन्दन किया यहाँ बड़ा मानस्तंभ था, अष्टान्हिका उत्सव में चम्पा निवासी लोग बाहर में वासुपूज्य प्रतिमा की पूजा करते थे। यतः

चम्पायां रममाणस्य सहगन्धर्वसेनया।
वसुदेवस्य संप्राप्तः फाल्गुनाष्टदिनोत्सव १
जन्म निष्क्रमण ज्ञान निर्वाण प्राप्तितोऽर्हतः
वासुपूज्यस्य पूज्यां तां चम्पा प्रापुः स्फुरद् गृहाम् ३
चम्पावासी जनः सर्वो निश्चक्राम सराजकः
प्रतिमां वासुपूज्यस्य पूज्यां पूजयितुं बहिः ५

गुणभद्र ने उत्तरपुराण के पर्व ५८ श्लो० ५२-५३ में चम्पा के अग्रमन्दिर में निर्वाण लिखा है।

अग्रमन्दरशैलस्य सानुस्थानविभूषणे
वने मनोहरोद्याने पल्यंकासन माश्रितः ५२
मासे भाद्रपदे ज्योत्स्ने चतुर्दश्यापराह्णके
विशाखायांययौ मुक्ति चतुर्नवति संयतैः ५३

मदनकीर्त्ति कृत शासन चतुर्विंशिका—

यस्याद्यापि सुदुन्दुभिस्वरमलं पूजां सुराः कुर्वते
भव्यप्रेरितपुष्पगन्धनिचयो ऽध्यारोहति क्ष्मातले
नित्यं नूतन पूजयार्चिततनुः श्री वासुपूज्योऽवभात्
चम्पायां परमेश्वरः सुखकरो दिग्वाससां शासनम् २१

निर्वाणकाण्ड में "चम्पाए वासुपुजजिणनाहो" प्रथम गाथा में लिखा है। उदयकीर्त्तिने "पुणचंपणयरि जिणवासुपुज्जु णिव्वाणपत्त छंडेवि रज्जु" तथा गुणकीर्त्ति ने तीर्थवन्दना में—चम्पापुरी वासुपूज्य सिद्धि झाले" लिखा है—

मेघराज ( १६ वीं शती ) ने—'वासपुज चम्पापुरीए' एवं 'ब्रह्म ज्ञानसागर कृत सर्वतीर्थ वन्दना में—

चम्पापुर सुभ थान वंग देश मझारह
वासुपूज्य जिनराज पंच कल्याणक सारह
जिनवर धाम पवित्र अंब चपक प्रविराजे
मानस्तंभ प्रचंड पंच शब्द घन वाजे
देश देशना संघ तिहां भाव सहित आवेमुदा
ब्रह्म ज्ञानसागर वदति इच्छित फल पावे सदा ४

चिमणा पण्डितकृत तीर्थवंदना ( १६५१ से ७० ) में :—

चम्पावती वासुपूज्य जनमले, सुरनर इंद्रादिक आले
लघु वय तप महोछव केले, चम्पापुरी तीर्थ प्रभुसिद्ध झाले ५

यहाँ हम दिगम्बर साहित्य के कुछ प्रमाण उद्धृत करने के पश्चात देखते हैं कि दिव्यात्रियों का यात्रा वर्णन बहुत कम मिलता है। श्वे० साहित्य में वासुपूज्य स्वामी के निर्वाणभूमि चम्पापुर के प्रचुर उल्लेख मिलते हैं पर मैं यहाँ केवल यात्रा वर्णन के ऐतिहासिक उल्लेख उद्धृत करता हूँ जिससे तीर्थ की स्थिति पर प्रकाश पड़ेगा।

सं० १४६७ में जौनपुर से ५२ संघपतियों का विशालयात्री संघ खरतर-गच्छनायक श्री जिनवर्द्धनसूरिजी के सानिध्य में निकला था जिसकी पूरब देश चैत्य परिपाटी इन्हीं आचार्य महाराज की रचित मिली है जिसमें पावा-पुरी, क्षत्रियकुण्ड, काकन्दी के पश्चात चम्पापुर का निम्नोक्त उल्लेख है :—

वंदिमो सुव्वया वासुपुज्जं जिणं, चम्पपुरिराय वसुपुज्ज वरनन्दणं।
भावरिउ तावभर चन्दनं सीयलं थुणउ भद्दिलपुरि तित्थयरसीयलं ॥२४॥

सं० १५६५ में कवि हंससोम ने क्षत्रियकुण्ड और काकन्दी की यात्रा करने के पश्चात ६० कोस पर चम्पानगर जाने का लिखा है—

ते वंदीजइ भावसिउ ए आगलि चम्पा वखाण ।
साठ कोस तिहांथकी निर० वासुपूज्य हीयड़इ आण ॥२४॥

सं० १७११-१२ में शीलविजय ने यात्रा की जिसका तीर्थमाला में :—

मिथिला नयरीमल्लि जिनन्द, वासुपूज्य चंपा सुखकंद ।
सती सुभद्रा उघाड़ी पोलि, शील तणी महिमा कल्लोलि १६

भयरवकृत तीर्थमाला में :—

चम्पानगरी कोस पंचवीस, तिहं आव्या मन धरिय जगीस
वासुपूज्य जनम्यातिहदेव, सुरनर किंनर सारइ सेव ६७
चैत्य नमी चाल्या तिहथकी, जिनवर कुंभकार वेन की
भागलपुर इक गांउ जाणि, खमणावसही तिणही ठाणि ६८
अंबाई वन मांहि ऊतरी, वासुपूज्य ना पद अनुसरी
राजगृही पाछा आविया, सहसाराम भावन भाविया ६९

श्री शिवचन्द्रसूरि ( जिनचन्द्रसूरि-पिप्पलक ) के सं० १७९० के आस-पास पूरब देश की यात्रा करने के उल्लेख मिलते हैं। उनके रास में—"चम्पापुरि मांहे वंदिया श्री वासुपूज्य जिन भाण" शीलविजय जी ने अपनी तीर्थमाला में सं० १७४६ में स्वर्णकान्ति नगरी के राजा कल्याणसेन के संघ का विवरण इस प्रकार लिखा है—"चम्पापुरि पोता नरराज वासुपूज्य पूज्याजिनराज। भानुचन्द्र वाचक तिहां मिल्या, तेहना संशय मनना टल्या यदि यह ऐतिहासिक तथ्य है, तो इस में भानुचन्द वाचक का नाम है जो चम्पापुरी में उन्हें मिले थे, वे सम्भवतः जिनप्रभसूरिजी के परम्परा में होंगे जिनके पास कवि बनारसीदासजी ने अध्ययन किया था।

सं० १७५० में सौभाग्यविजय ने तीर्थमाला में अष्टापदावतार के पश्चात बैजनाथ महादेव का वर्णन कर दस कोस पर चम्पा भागलपुर का इस प्रकार लिखा है—

जे जिहांगिरां थी जव जाय रे, दस कोसे मारग थाय रे ।
चम्पापुर भागलपुर कहवायरे, वासुपूज्य जनम तिहां ठाय रे । ७ ।
चम्पा मां एक प्रासाद रे, श्री वासुपूज्य उदार रे
पूज्या प्रभुजीना पाय रे, कीधी निज निर्मल काय रे । ८ ।
चम्पा भागलपुर अन्तराल रे, एक कोस तणो छे विचाल रे ।
वीचें करणराय नो कोट रे, वहे गंगाजी तस ओट रे । ९ ।
कोट दक्षिण पास विशाल रे, जिहां जिनप्रासाद रसाल रे ।
मोटा दोइ माणक थम्भरे, देखी मन थयो अचम्भ रे । १० ।

तिहांनावासी जे लोक रे, बोले वाणी इहाँ इम फोक रे
ए विष्णु पादुका जाण रे, अति जीरण छे कमठाण रे ११
तिहाँ थंभ नी ठाम होय रे, पंच कल्याणक जिन जोय रे
उद्धार थया इण ठाम रे, कहियइं किण किणरा नाम रे १२
इण नगरी सुदर्शन सार रे, रह्या प्रतिमा काउसग्गधाररे
अभया दासी लेवाय रे, राणी ने द्यै मन लाय रे १३
न चल्यो ब्रह्मचारि चित्त रे, राखो जगमाहि कित्त रे
शूली सिंहासन थाय रे, राजादिक प्रणमैं पाय रे १४
थई सती सुभद्रा नार रे, उघाड्यां चम्पा बार रे।
चालणि इं काढयो नीर रे, इण चंपानगरी धीर रे ॥१५॥
चंदनबाला इण गाम रे, जनमि निर्मल परिनाम रे
इम हुआ अनेक उदार रे, धर्मि इण नगर मझार रे ॥१६॥
चंपा थी दक्षिण सार रे, गिरि मक्षुदा नाम मंदार रे।
कोश सोलह कहेंते ठामि रे, तिहाँ मुक्ति वासुपूज्य स्वमि रे ।१७।
प्रतिमा पगलां कहिवाय रे, पणियात्रा थोड़ा जाय रे।
एहवी वाणी विख्यात रे, कहें लोक ते देशी बात रे ।१८॥
ते तीरथ भूमि निहार रे, आया भागलपुर सुविचार रे।
जयवंता तिहां **ओसवाल** रे, माने षट दर्शन प्रतिपाल रे १९
दिगम्बर श्रावक सार रे, देहरासर देव जुहार रे।
वयराड़ी छैं गाम पास रे, भागलपुर ने उल्लास रे ॥२०॥
एक देवल तेणे गाम रे, हतो हमणा छे ते ठाम रे।
तिहां थी चाल्याचित चंग रे, हवे आव्या देशज बंग रे ।२१॥

विजयसागर ने सम्मेतशिखरजी से जाते हुए चम्पा के संबन्ध में केवल निम्नोक्त गाथा लिखी है जो पृष्ठ चम्पा से संवन्धित लगतो है।

तिहाथी हवि कीध पयाणं, वाटिं छइ चम्प वखाणं;
श्रेणिक सुत कोणिअ वासी, तिहां वीर रह्या चउमासी १४

आगे चलकर फिर इस चम्पापुर का वर्णन किया है—

पट्टणा थी पूर्वि सो कोशे पुर चंप हो वी०
कल्याणक वासुपूज्य ना पंच नमीजइ आय हो वी० ८
दिवाने एक देवसी कीधी तेणि उपाधि हो वी०
श्वेताम्बर थिति उथपी थापी दिग्पट व्याधि हो वी० ९

पिण परपुत्र सपुत्र को न हूओ कोए संभालि हो वी०
जे नर तीरथ ऊथपइ तेहनि मोटी गाल्य हो वी० १०
चंप वराड़ी जन कहि, गंग बहइ तस हेठि हो वी०
सतीअ सुभद्रा इहाँ हुइ, हुओ सुदर्शन सेठ हो वी० ११

सं० १७३८ में रचित माता माणकदेवी रास में समेतशिखर-पंचेट के पास ही पृष्टचम्पा बतलाई है :—

"पृष्टि चंपापुरी देखि आणंदभरि जीर्ण जिनराज मंदिर जुहार्यो।"

चम्पा और पृष्ठचम्पा को इन दोनों ने अलग २ बतलाया है दूरी भी काफी है। इस समय एक चम्पानगर जंबुआ से उत्तर और नदी के पार बराकड़ मन्दिर से पूर्व १ मील है वहाँ भीलों के १०० घर निवास करते हैं अब मन्दिर नहीं है।

चम्पापुरी तीर्थ सम्बन्धी विशद वर्णनों में सर्वप्राचीन जिनप्रभसूरिकृत तीर्थकल्प है जिसका अनुवाद आगे दे चुके हैं।

उपर्युक्त यात्रा विवरण से मालूम होता है कि सं० १४६७ में जिनवर्द्धनसूरि जी के समय निकला यात्री संघ चम्पापुर यात्रा करके भद्दिलपुर गया है। सं०१५६५ में हँससोम क्षत्रियकुंड कांकंदी की यात्रा कर ६० कोश पर चम्पापुर जाते हैं। भैरव कृत तीर्थमाला में लिखा है कांकंदी से २५ कोश चम्पा नगरी आये और तीर्थ वंदना करके भागलपुर आये वहाँ दिगम्बर (खमणा वसही) जिनालय है अम्बाई बन में उतरे वासुपूज्य स्वामी के चरण अनुसरण कर वापस राजगृह आये।

मुनि सौभाग्यविजय लिखते हैं चम्पानगर में एक वासुपूज्य जिनालय है। चंपा और भागलपुर में एक कोश का अन्तर है। बीच में करणराय का कोट है जिसके ओट से गंगा बहती है। कोट से दक्षिण की ओर जिनालय और दो बड़े मानस्तंभ है वहाँ की जीर्ण पादुका को वहाँ वाले विष्णु पाकका बताने का वृथा बकवास करते हैं। ये वास्तव में जिनेश्वर के पंच कल्याणक स्तम्भ पादुका है। फिर यहाँ के सुदर्शन, सुभद्रा चंदनबालादि को याद किया है। चम्पा से दक्षिण में मंदारगिरि १६ कोश है जहाँ वासुपूज्य भ० का मोक्ष स्थल कहलाता है प्रतिमा चरण भी हैं पर यात्री कोई से जाते हैं। वह तीर्थ भूमि देखकर भागलपुर लौटे यहाँ षटदर्शन प्रतिपालक ओसवालों और दिगंबर श्रावकों के घर हैं देहरासर में देववन्दन कर वैराड़ो आये वहाँ पहले मन्दिर था अब स्थान मात्र है। विजयसागर ने पटना से सौ कोश चम्पानगर लिखा है और वे यह लिखते हैं कि वासुपूज्य स्वामी के कल्याणक वाले

श्वेताम्बर तीर्थ की उत्थापना कर देवसी नामक दिवाना ने दिगम्बर स्थापना कर ली जिसके वंश में कोई पुत्रादि नहीं रहा तीर्थ उत्थापक के लिए यह बड़ी गाल है। विजयसागर के समय मालूम होता है कि तीर्थ पर दिगम्बर अधिकार हो गया था। यह देवसी कोई अधिकारी व्यक्ति था, दयाकुशल कवि लिखते हैं कि मथुरातीर्थ में भी उसीने सं० १६४३ में खमणावसही कर डाली।

इस प्रकार चम्पापुरी प्राचीन मन्दिरों के लिए श्वे० समाज ने झगड़ा न कर चंपानाले पर स्थित जीर्ण स्थान पर तीर्थ कायम कर लिया। साह हीरानन्द मुकीम ने सं० १६६१ में इधर यात्रार्थ आने के पश्चात् सं० १६६६ में प्रतिष्ठा कराई हो ऐसा अनुमान है। सं० १६७० में आगरा के कुंवरपाल सोनपाल के यात्रा वर्णन में कवि विनयसागर लिखते हैं—

चम्पानगरी शोभता, वासुपूज्य अरिहंत रे
पंच कल्याणक तसु थया, इम बोलइ सिद्धान्त रे ॥७३॥

चम्पापुरी की पाषाण प्रतिमाओं में सर्वप्राचीन प्रतिमा सं० १६६८ की है जो सा०हीरानन्द ने बनवाकर खरतरगच्छनायक श्री जिनचन्द्रसूरि से प्रतिष्ठित करवाई थी। ये हीरानन्दसाह[1] जहांगीर के मुकीम और ओसवाल जौहरी थे इन्होंने सं० १६६८ में एक संघ निकाला था जिनका विवरण खरतर गच्छीय कवि वीरविजय कृत स्तवन में प्राप्त है। कवि बनारसीदासजी ने भी अर्ध कथानक में उल्लेख किया है।

सं० १८५६ में चम्पापुरी में प्रतिष्ठा हुई थी और तीर्थोद्धार हुआ था। खरतरगच्छाचार्य श्री जिनचन्द्रसूरि ने प्रतिष्ठा की और बीकानेर निवासी कोठारी अनूपचन्द के पुत्र जेठमल ने तथा अजीमगंज निवासी गोलछा अखयराम आदि समस्त संघ ने कई प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा करवाई। सं० १८७५ में जिनचन्द्रसूरिजी ने संघ सह यात्रा की थी सं० १९०० में दूगड़ सरूपचन्द, करमचन्द और हुलासचन्द की जननी प्राणबीबी ने संभवनाथ प्रतिमा की प्रतिष्ठा करवाई। सं० १९०७ में फिर मकसूदाबाद के संघ ने शांतिनाथ प्रतिमा प्रतिष्ठित की। सं०१९२० और १९२५ में सुप्रसिद्ध तीर्थोद्धारक दूगड़ प्रतापसिंह के पुत्र धनपतसिंहजी ने खरतरगच्छ नायक श्री जिन हंससूरि के विजय राज्य में उ० सदालाभ, सागरचन्द गणि से नवपद तथा वासुपूज्य जन्म कल्याणकादि की प्रतिष्ठा करवाई।

इस समय चम्पापुरी की विशाल धर्मशालाओं में दो वासुपूज्य भगवान के

---

१ नाहरजी ने इन्हें जगतसेठ के पूर्वज होने का अनुमान किया है जो ठीक नहीं है।

सुन्दर जिनालय और एक दादावड़ी है जिसमें अभयदेवसूरिजी की प्रतिमा व दादा जिनदत्तसूरि, जिनकुशलसूरिजी के चरण हैं ।

सं० १९३० में अहमदाबाद के सेठ उमाभाई व हरकोर सेठानी के संघ वर्णन में—

हवे तिहां थी चाल्या आगल रे गंगा नदी उतरता
फरी रेल वेलमा बैठा रे चम्पानगरी आवता
प्रभु बारमा जिनवर भेट्यारे कर्म मेल सवि धोवता १३
तिहां पंच कल्याणक पूजी रे आतम ध्याने अनुभवता
फरी रेल वेज चढी आव्या रे वरधमान जाइ वीसमता
जिन पूजी रेल मां बैठा रे रानीगंज विसराम करे
मुकाम बीजे गिरि निरखीरे भवभव पातक दूर हरे १४

## नाथनगर

नाथनगर में बाबू सुखराज रायजी का बनवाया हुआ मीने के काम का सुन्दर दर्शनीय मन्दिर है जिसमें श्री वासुपूज्य स्वामी की संवत् १८७७ में प्रतिष्ठित प्रतिमा है ।

## भागलपुर

प्राचीन काल में चम्पापुरी, नाथनगर और भागलपुर सभी एक ही महानगर चम्पापुर था भागलपुर जिले का बड़ा नगर है और रेलवे स्टेशन भी बड़ा विशाल है । नाथनगर यद्यपि छोटी स्टेशन है और वहां सब गाड़ियाँ ठहरती नहीं अतः यहीं से चम्पापुर जाने आने में सुविधा है । स्टेशन के सामने जैन श्वेताम्बर धर्मशाला व उसके बीच में वासुपूज्य स्वामी का मन्दिर है । यह प्राचीन चम्पापुर का ही एक भाग होने से शिलालेख व चरण पादुका लेखों में इसे चम्पानगर ही लिखा है सम्वत १९३१ में प्रतिमाएँ और पंच-कल्याणक के चरण दूगड़ प्रतापसिंहजी की भार्या और राय लक्ष्मीपतसिंह धनपतसिंह ने प्रतिष्ठित करवाई ।

भागलपुर धर्मशाला के अभिलेख से विदित होता है कि माता महताब कुमार की इच्छा थी की भगवान वासुपूज्य की पंच कल्याणक भूमिपर धर्म-शाला बनवाई जाय पर उनके सं० १९३२ श्रावण कृष्ण ६ को कालधर्म प्राप्त कर जाने पर उनके पुत्र लक्ष्मीपतसिंह धनपतसिंह ने धर्मशाला और जिनालय बनवाकर सं० १९३६ सन् १८७९ महारानी विक्टोरिया के राज्य में प्रतिष्ठा करवाई । शिलालेख में स्पष्ट लिखा है कि मन्दिर व धर्मशाला को संघ सम्भा-लेगा और संघ ही मालिक है (नाहर ले० १६४) ।

———

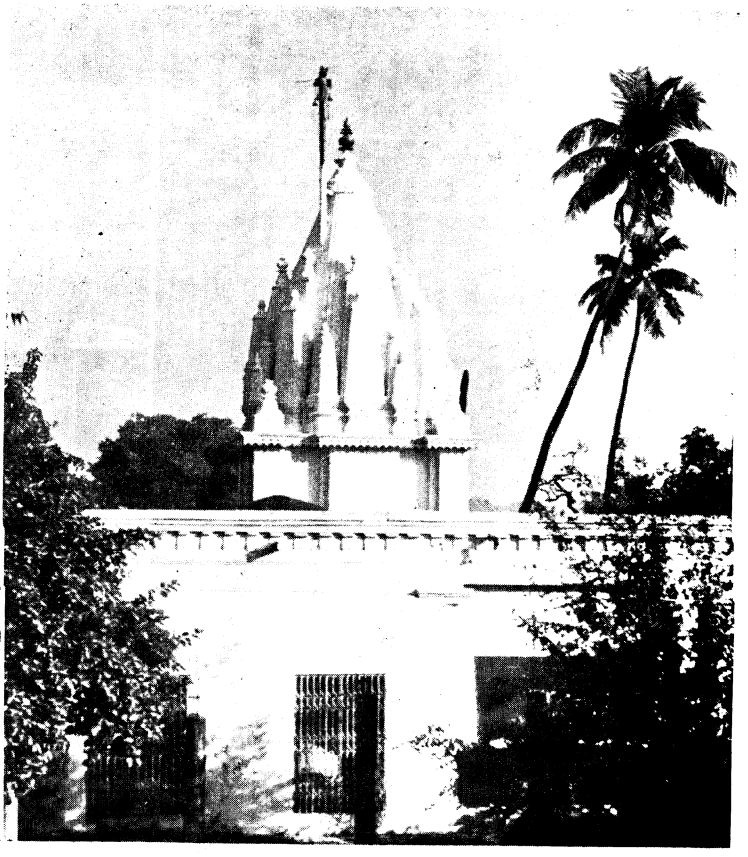

श्री वासुपूज्य जिनालय, भागलपुर

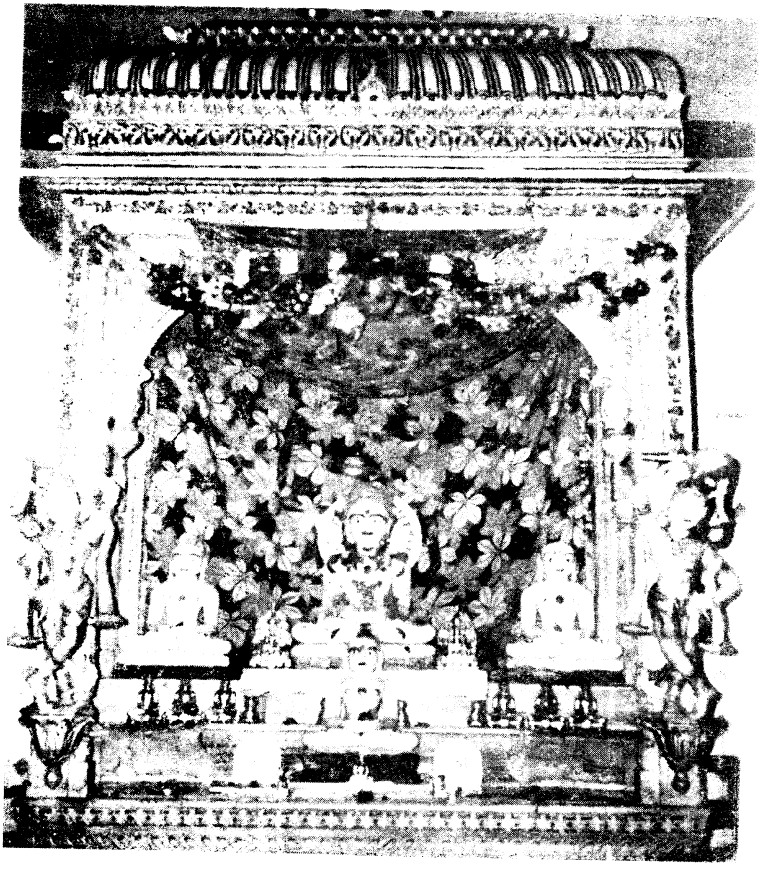

[illegible] जिनालय की मूलवेदी, [illegible]

( [illegible] )

# मिथिला तीर्थ

जैन साहित्य में मिथिला नगरी का नाम पर्याप्त प्रसिद्ध है। भगवान महावीर ने यहाँ छः चातुर्मास किए थे। भगवान मल्लिनाथ और नमिनाथ की यह जन्मभूमि थी। विदेह (उत्तर विहार) की यह राजधानी था। जनक राजा और नमि प्रत्येकबुद्ध यहीं के थे। सती सीता की जन्मभूमि होने से यह हिन्दुओं का भी तीर्थ है। श्रीजिनप्रभसूरि के विविध तीर्थकल्प में मिथिला के संबन्ध में संक्षेप में पर्याप्त ज्ञातव्य मिलता है। दि० साहित्य में यति वृषभ, रविषेण, जटासिंहनंदि, जिनसेन और गुणभद्र ने कल्याणक भूमि रूप में उल्लेख किया हैं पर वहाँ की तत्कालीन स्थिति का ऐतिहासिक वर्णन कुछ नहीं लिखा। श्री जिनप्रभसूरिजी के तीर्थकल्प का हिन्दी अनुवाद इस लेख के साथ दे रहे है।

संस्कृत भाषा के विद्वानों की मिथिला एक प्रसिद्ध भूमि रही है। सोलहवीं शताब्दी में खरतर गच्छीय उपाध्याय मुनिमेरू का मिथिला-तिरहुत देश में विद्वानों के साथ शास्त्र चर्चा हुई थी जिसकी विवरणात्मक प्रति बीकानेर ज्ञानभँडार में ४० वर्ष पूर्व देखी थी। "तैरभौक्तिक देशे भट्ट विवाद समयें" रचना होने का उसमें उल्लेख है।

पन्द्रहवीं शताब्दी से अठारहवीं शताब्दी तक कुछ यात्रा विवरण मिलते हैं उनके बाद सं० १८७५ में प्रतिष्ठा होने के भी प्रमाण हैं जो आगे दिए गए है। पवित्र कल्याणक भूमि की वर्त्तमान स्थिति क्या है यह जाकर देखना जैन समाज का आवश्यक कर्त्तव्य है।

शिलालेखों से सीतामढी में मन्दिर थे यह प्रमाणित है तथा तीर्थकल्प में उल्लिखित जगई जगदीशपुर वहाँ से सात मील है। शीलविजय जिस जनकपुर का वर्णन करते है वह सीतामढी से ३० मील है।

श्री जिनवर्द्धनसूरिजी महाराज ने तीर्थमाला में इस प्रकार लिखा है।

"महिला नगरे नमि जिण मल्लि जुहारि"

पुण्यसागर ने सं० १६०२ में तीर्थमाला में लिखा है :—

मिहिला दोइ अवतार मल्लि तहा नमि २ जनमीया ए ॥१४१॥

सं० १६६१ में आगरा के लोढ़ा कुंवरपाल सोनपाल के संघ वर्णन में सुमतिकलश शिष्य कवि विनयसागर ने इस प्रकार लिखा है—

मिथिला पुरि वरि वंदीयइ श्री मल्लिनाथ नमि नाम रे।
आठ कल्याणक बेऊतणा जिह हुआ अति अभिराम रे ॥७४॥
श्री नमिराज नरेसरू जिह बाध्या बहु सोभागिइं रे
सुंदर संजम आदरिउ जिणि वलइ तणइ वयरागिइं रे ॥७५॥

**विजयसागर—**

हाजीपुर उत्तरदिशि कोश वड़ा च्यालीस हो
महिमा मल्लि नमीसरू जनम्या दोय जगदीश हो वी० १२
प्रभु पग आगि लोटिंगणां लीधां सीधासि काम हो
लोक कहिं ए सुलक्खणी सीता पीहर ठाम हो वी० १३

**सौभाग्यविजय—**

पटणा थी उत्तर दिसे चि० कोस पचास छे ठाम जी०
प्रथम गुणठाणी कहे चि० सीतामढी इस्युं नाम जी० २२
महिला नामें परगनों चि० कहीईं दफ्तर मांहि जी०
पण महिला इन नामनो चि० गाम वसे कोईं नाहिं जी० २३
ते सीतामढी विषें चि० पगला जिनवर दोय जी०
मल्लीनाथ ओगणीसभा चि० एकवीसमा नमि होय जी० २४
तिहां थी चौदह कोसें भली चि० जनकपुरी कहेवाय जी०
सीता पीहर परगडो चि० धनुष पड्यो तिणेठाय जी० २५
ते तीरथ वंदी वल्या चि० देख्यो दिरहुत देश जी०
प्रवलमिथ्यात्वी वसे घणा चि० नहिं तिहांजैन प्रवेश जी० २६

शीलविजय ने केवल "मिथिला नगरी मल्लि जिणंदां" उल्लेख किया है कवि सौभाग्यविजय ने तो स्पष्ट शब्दों में कहा है पटना के उत्तर की ओर ५० कोस पर सीतामढी है वहीं जिनालय है। महिला या मिथिला नाम का गांव अब कोईं नहीं है और वह नाम केवल दफ्तरों में रह गया है। वहाँ सभी प्रथम गुणस्थानी हैं जैनों का वहीं तिरहुत देश में कोईं वस्ती नहीं है।

सं० १८७५ वैशाख सुदि १० के दिन मिथिला में श्री मल्लिनाथ और नमिनाथ भगवान के चरणों की प्रतिष्ठा श्री जिनहर्षसूरिजी के आदेश से वा० भाग्यधीर गणि ने कराई थी। इनके लेख से स्पष्ट है कि जीर्णोद्धार पूर्वक इन चरणों का निर्माण प्रसन्नचन्दजी मालू ने करवाया था। इसके

बाद सं० १६३३ में माघ सुदि १२ के दिन मिथिला नगरी में मल्लिनाथ व नमिनाथ भगवान की प्रतिमाऐं मकसूदाबाद निवासी दूगड़ राय धनपत सिंहजी ने निर्माण करके लुँकागच्छ के आचार्य अमृतचंद्रसूरिजी से प्रतिष्ठा कराई थी इसमें सीतामढी मिथिला में प्रतिष्ठा कराने का स्पष्ट उल्लेख है अतः मालूम होता है कि उस समय तो तीर्थ मन्दिर-धर्मशाला आदि अच्छी स्थिति में थे। बाद में न मालूम कब और क्यों वहाँ के चरण व दोनों प्रतिमाएँ भागलपुर लाकर विराजमान कर दिए इसका पता नहीं चलता। सं० १६७२ में श्री पूरणचन्दजी नाहर ने लेख संग्रह किए इस समय से ये चरण भागलपुर के मन्दिर में थे। नाहरजी जैन लेख संग्रह भा० १ के फुटनोट पृ० ३६ में इस प्रकार लिखते हैं।

"यह चरण दरभंगा लेन में सीतामढी स्टेशन के पास मिथिला नगर से उठा कर लाया भया है वहाँ इस समय कोई जैन मन्दिर नहीं है।"

प्रतिष्ठा के ४० वर्ष बाद ही चरण व प्रतिमाएँ भागलपुर में पायी जाती हैं और वहाँ के तीर्थ-मन्दिर का किसी को पता नहीं, यह आश्चर्य का विषय है। जैन समाज ने कभी वहाँ जाकर मन्दिर या खण्डहर किस स्थिति में है? यह संभाला तक नहीं, दो-दो तीर्थंकरों की कल्याणक भूमि की यह दशा अवश्य जैन समाज के लिए खेद का विषय है।

## श्रीजिनप्रभसूरि कृत मिथिला तीर्थ-कल्प

### [ हिन्दी अनुवाद ]

देवताओं से प्रणत श्री मल्लिनाथ और नमिनाथ जिनेश्वर के चरण कमलों में प्रणाम करके मिथिला महानगरी का कल्प लेश मात्र कहता हूँ।

इसी भारतवर्ष में पूरबदेश में विदेह नामक जनपद है जो वर्त्तमान काल में तिरहुत देश कहलाता है। वहाँ प्रत्येक घर में मधुर मञ्जुल फलों के भार से नत कदलीवन दृष्टिगोचर होते हैं। पथिक लोग भी दूध में सीजे हुए चिउड़ा और क्षीर का भोजन करते हैं। पद पद पर मीठे पानी वाली वापी, कूप सरोवर और नदियाँ है। प्राकृत-ग्राम्यजन भी संस्कृत भाषा विशारद और अनेक शास्त्रों में प्रशस्त-अति निपुण लोग हैं। वहाँ मिथिला नामक ऋद्धि समृद्धि से परिपूर्ण नगरी थी जो वर्त्तमान में "जगई" नाम से प्रसिद्ध है।

इसके निकट ही जनक महाराजा के भ्राता कनक का निवास स्थान कनकपुर है।

इस मिथिला नामक नगरी में कुम्भराजा और प्रभावती रानी की कोख से उत्पन्न भगवान मल्लिनाथ स्त्री तीर्थंकर और विजय राजा-वप्रादेवी के नन्दन नमि जिनेश्वर का च्यवन-जन्म दीक्षा और केवलज्ञान कल्याणक हुए हैं।

यहाँ श्री महावीर स्वामी के अष्टम गणधर अकम्पित का जन्म हुआ है।

यहाँ जुगबाहु-मयणरेहा के पुत्र नमी नामक महाराजा चूड़ियों के शब्द से प्रत्येकबुद्ध हुए और सौधर्मेन्द्र परीक्षित वैराग्य निश्चय वाले हुए।

यहाँ लक्ष्मीगृह चैत्य में आर्य महागिरि का शिष्य कौडिन्य गोत्रीय अश्वमित्र वीर निर्वाण के २२० वर्ष बीतने पर अनुप्रवाद पूर्व में रही हुई नैपुणिका वस्तु को पढ़ते हुए श्रद्धाहीन हो गया। प्रवचन स्थविरों द्वारा अनेकान्तिक युक्तियों से समझा कर मना करने पर भी वह उत्सूत्र प्ररूपणा कर चौथा निन्हव हुआ।

श्री महावीर स्वामी के चरण कमलों से पवित्रित जल वाली बाण गंगा और गण्डक की नदियों का संगम इस नगरी को पावन करता है।

यहाँ भगवान महावीर चरम तीर्थंकर ने (छः) वर्षाकाल बिताए थे।

यहाँ जनकसुता महासती सीता की जन्मभूमि का स्थान विशाल वट विटपी प्रसिद्ध है।

यहाँ श्री राम-सीताके विवाह स्थान साकल्लकुण्ड नाम से लोक में रूढ हैं। पाताल लिङ्ग आदि अनेक तीर्थ भी यहाँ विद्यमान हैं।

यहाँ के मल्लिनाथ जिनालय में वैरुट्या देवी, कुबेर यक्ष एवं नमिनाथ चैत्य में गन्धारी देवी, भृकुटी यक्ष आराधक जनों के विघ्न दूर करते हैं।

जिन मार्ग में स्थित जो लोग इस मिथिला कल्प को पढते-सुनते हैं उनके कण्ठ में मुक्तिश्री वरमाला डालती है (जिणपह शब्द से जिनप्रभसूरि—कल्प कर्त्ता का नाम भी समझना चाहिए)।

ग्रंथ संख्या २४ और १८ अक्षरों वाला यह कल्प समाप्त हुआ।

---

# श्री जैन संस्कृति कला-मन्दिर द्वारा प्रकाशित

## एवं प्राप्य ग्रन्थादि

(१) सम्मेत शिखर ( लेखक-महेन्द्र सिंघी ) १३० चित्रसह
प्रस्तावना—भंवरलाल नाहटा मुल्य-१२) रु०

(२) श्री पावापुरी १६ रंगीन, १६ इकरंगे चित्रयुक्त ( लेखक महेन्द्र सिंघी )
प्रस्तावना—विजयसिंह नाहर मुल्य-११ रु०

(३) राजगृह ( लेखक-भंवरलाल नाहटा )
प्रस्तावना—शुभकरण सिंह सचित्र मुल्य-२ रु०

(४) क्षत्रियकुण्ड ( लेखक-अगरचंद नाहटा, भंवरलाल नाहटा )
सचित्र मुल्य-७५ पै

(५) कुण्डलपुर (नालंदा) लेखक-भंवरलाल नाहटा सचित्र मुल्य-७५ पै

(६) चम्पापुरी ( लेखक भंवरलाल नाहटा ) सचित्र मुल्य ७५ पै

(७) पूर्व भारत के जैनतीर्थों की मनोरम फोटो चित्रावली ५० चित्र मुल्य ७५ रु०

(८) श्री भोमियाजी का रंगिन चित्र मुल्य २ रु०

श्री जै
पी

श्री
पी